Fortnightly per copy Rs. 4/-

ओ३म्

18th January 2021

आर्य जीवन

ఆర్య జీవన్

संस्कृति संरक्षण व सामाजिक परिवर्तन का संकल्प

హిందీ-తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక

Date of Publication 2nd and 17th of every Month, Date of Posting 3rd and 18th of every Month

महर्षि देव दयानन्द के जीवन की कुछ मुख्य-मुख्य घटनाएँ

-खुशाल चन्द्र आर्य

महर्षि देवद्यानन्द के जीवन की वैसे तो सैकड़ों नहीं हजारों मुख्य-मुख्य घटनाएँ है परन्तु हम यहाँ पर कुछ विशेष प्रमुख घटनाओं का ही वर्णन करते हैं जो इसी भांति है :-

१) **जन्म स्थान :** महर्षि देव दयानन्द का जन्म मोरवी राज्य (गुजरात) में टंकारा गाँव में फाल्गुन बदी दशवी विक्रम संवत् १८८९ तदनुसार १२ फरवरी सन् १८२५ ई. में पिता कर्षन जी तिवाड़ी माता यशोदा देवी, कई लोगों का कहना है कि माता का नाम ''अमृताबेन'' था। जो भी हो, हो सकता है एक ही माताजी के दो नाम हो, इनके घर जन्म हुआ। स्वामी जी के बचपन का नाम मूलशंकर था। उनके पिता कर्षन जी तिवाड़ी औदिज्य ब्राह्मण थे। उनको बचपन से दयाल जी के नाम से भी पुकारा जाता था। इनके पिताजी शिव के अनन्य भक्त थे।

२) **शिव-शान्ति को हुआ ज्ञान :** फाल्गुन बदी चर्तुदशी सम्वत् १८९४ (२२ फरवरी सन् १८३८ ई.) को शिवरात्रि का दिन आ गया। बस्ती के सभी शैव अपने बच्चों के साथ शिव अराधना के लिए मन्दिर की ओर प्रस्थान करने लगे। मूलशंकर भी पिताजी के साथ मन्दिर में चला गया पिताजी ने उसे पहले ही समझा दिया था कि जो भक्त पूरी रात जागरण करके शिवजी कि अराधना करता है, उसे ही सुफल की प्राप्ति होती है। मूलशंकर ने निश्चय कर लिया था कि वह सारी रात जागकर शिव की विधिवत् अराधना करेगा, परन्तु उस समय उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब रात्रि का तीसरा पहर आरम्भ होते ही लगभग सभी अराधन मन्दिर के बाहर जाकर निद्रा की गोद में समाते चले गये। उसके पिताजी वही लुढ़क गए और खर्राटें गरने लगे। पर धन का धनी मुलशंकर शीतल जल की सहायता से जागते रहे। और विधिवत् शिवाराधना में लगें रहे। सभी भक्त गहरी निद्रा में सो गए थे अवसर पाते ही चूहे अपने-अपने बिलों से निकलकर शिव पिण्डी पर चढ़े और प्रसाद का भोग लगाने लगे। यह सब देखकर पत्थर पूजा से मूलशंकर का मोह भंग हो गया। उसे निश्चय हो गया कि यह व शंकर नहीं है, जिसकी कथा उसे सुनाई गई है कि वह तो चेतन है, डमरू बजाता है, बैल पर चढ़कर यात्रा करता है, शत्रुओं के संहार के लिए त्रिशुल रखता है, परन्तु यह शिव तो चुहों से अपनी भी रक्षा नहीं कर सकता, तो हमारी रक्षा क्या करेगा, ऐसा विचार आते ही उसने अपने पिताजी के जगा दिया और एक सीधासा प्रश्न किया ''पिताजी यह कंथा वाला शिव है या कोई दूसरा ?''

पिता कर्षन जी तिवाडी ने अपने पुत्र मुलशंकर को शिव के सम्बन्द में बहुत समझाया परन्तु पुत्र का मन पिताजी के बातों से सन्तुष्ट नहीं हुआ और मुलशंकर को इस घटना से पत्थर पूजा यानि जड़ पूजा से विश्वास उठ गया और वह मन्दिर से उठकर घर चला गया और पिताजी की बिना आज्ञा लिए माता जी से भोजन लेकर भोजन कर लिया और सो गया।

३) **छोटी बहन व चाचाजी की मृत्यु और गृह त्याग :** शिव रात्रि के दृष्य से मूलशंकर के मन से वैराग उत्पन्न हो गया और सच्चे शिव की खोज में ध्यान रहेने लगा इसी बीच जब मूलशंकर सोलह वर्ष के हुए तो उसकी छोटी बहन की हैजे के बिमारी से मृत्यु हो गई, तब मूलशंकर बिल्कुल नहीं रोया और एक तरफ खड़ा होकर विचार करने लगा कि यह मृत्यु क्या है ? क्या मुझे भी एक दिन इस मृत्यु के मुख में जाना पड़ेगा। तीन साल बाद जब मूलशंकर की आयु उन्नीस वर्ष की हो गई भी, तब उसका चाचा जो उसको अति प्यार करता था, उसकी मृत्यु हो गई तब मूलशंकर बहुत अधिक रोया और उसकी वैराग की भावना और अधिक बढ़ गई। उसने अपनी भावना को मित्रों को बतला दी और यह बात उनके माता-पिता के पास पहुँच गई। उन्होंने मूलशंकर का विवाह करने का विचार बना लिया। मूलशंकर विवाह किसी हालत में भी करना नहीं चाहते थे। इस लिए उसने गृह त्याग का मन बना लिया। उसने सन् १८४६ ई. में अपनी इक्कीस वर्ष की आयु में गृह त्याग करके जंगल की ओर चल पड़े। कुछ दूर चलने पर उसको साधु वेष में कुछ ठग मिले जिन्होंने मूलशंकर के गहने अंगुठी, तथा किमती वस्त्र उतरवा लिए। चलते-चलते मूलशंकर सामला (अहमदाबाद) और राजकोट के बीच में पहुँचे वहाँ उसको एक ब्रह्मचारी मिला जिसने उसको सन् १८४६ ई. में ब्रह्मचर्य की दीक्षा दी और उसका नाम शुद्ध चैतन्य रख दिया।

अब ब्रह्मचारी शुद्ध चैतन्य कुछ दिन सामला ठहरकर फिर वे आगे बढ़े तो वे अहमदाबाद के समीप कोटकाँगड़ा पहुँचे, वहाँ वैरागियों की डेरा लगा हुआ था। वहाँ शुद्ध चैतन्य को सिद्धपुर (गुजरात) मेला की जानकारी मिली, जहाँ साधु-सन्त योगी-महात्मा एक तिल होते है। वहाँ के लिए प्रस्थान किया। रास्ते में उनको अपने कुल का परिचित एक बैरागी साधु मिला। उसके पूछने पर सुख चैतन्य ने भावावेश में अब तक की सम्पूर्ण घटना उसे कह सुनायी और सिद्धपुर मेले में जाने का अपना विचार भी बतला दिया। उस परिचित वैरागी ने अपने घर पर पहुँच कर कर्षन जी तिवाड़ी को शुद्ध चैतन्य का पूरा विवरण साथ ही सिद्धपुर मेले मेंजाने का पूरा विवरण समाचार-पत्र द्वारा भेज दिया। उधर शुद्ध चैतन्य ने सिद्धपुर मेले में निलकण्ठ महादेव

के मन्दिर में अपना आसन जमाया । उधर पिताजी पत्र मिलते ही कुछ सिपाहियों को साथ लेकर सिद्धपुर मेले में पहुँच गये और निलकण्ठ महादेव के मन्दिर में पहुँचकर अपने बेटे को वैरागी वेश में देखकर आपे से बाहर हो गए और बोले "कुल कलंकी", क्या तू तेरी माता की हत्या करना चाहता है ।" पिता को देखकर शुद्ध चैतन्य खडा हुआ और उनके पैर छुते हुए बोले "किसी के बहकावे में आकर मैंने घर त्याग दिया था, अब मैं आपके साथ चलूँगा । परंतु उससे पिताजी को क्रोध शान्त न हुआ । उन्होंने उसके गेरूए वस्त्र फाड़ दिये और तुम्बा तोड़ दिया । उसे श्वेत वस्त्र पहनाये और सिपाहियों को पहरे पर बिठा दिया । दो दिन के ऐसे ही निकल गए । तीसरी रात का तीसरा प्रहर आरम्भ हुआ तो प्रहरी उँघने लगे । धीरे-धीरे प्रगाढ़ निद्रा में पहुँच गए, तब शुद्ध चैतन्य शौच जाने का बहाना करके पानी से भरा लोटा हाथ में लिया और दबे पाँव वहाँ से खिसक गए । कुछ दूर चलने के बाद उसे एक बागिचा में मन्दिर दिखाई दिया । मन्दिर के साथ ही एक विशाल बटवृक्ष था । मन्दिर की छत्त पर बटवृक्ष की ओट में वह बैठ गए । कुछ देर बाद कुछ सिपाही मन्दिर में आए और शुद्ध चैतन्य को बिना देखे ही वहाँ से चले गए । प्रातः शुद्ध चैतन्य पेड़ के सहारे नीचे आए और दो कोस दूर एक ग्राम में रात व्यतीत की । इस प्रकार पिता जी से अन्तिम भेंट सिद्धपुर में करके फिर सदा के लिए विदा हो गए ।

४) **सन्यास दिक्षा** : मन्दिर से चलकर शुद्ध चैतन्य अहमदाबाद होते हुए बडौदा में आकर चैतन्य मठ में ठहरें । वहाँ उनकी ब्रह्मानन्द ब्रह्मचारी जो वेदान्त के अच्छे विद्वान थे, उनसे भेंट हुई । इनसे वेदान्त पर खुलकर चर्चा हुई और उनसे कुछ वेदान्त की जानकारी भी हुई । शुद्ध चैतन्य को भोजन बनाने में काफी समय लग जाता था । जिस से विद्याध्यन में बाधा पड़ती थी । यदि सन्यास की दिक्षा ले ली जाए तो इस झंझट से बचा जा सकता है । इसलिए उसने एक ब्रह्मचारी वैदिक विद्वान् स्वामी पूर्णानन्दजी चागोद (गुजरात) के पास एक जंगल में आए हुए थे । उनसे सन्यास की दीक्षा लेने का विचार किया और जल्दी ही उनके पास पहुँच कर सन्यास की दीक्षा देने की प्रार्थना की । पहले तो वह सन्यास की दीक्षा देने से इनकार कर दिया । फिर कुछ समय बाद काफी अनुनय-विनय से दीक्षा देने की अनुमती दे दी । और शुद्ध चैतन्य को स्वामी पूर्णानन्द ने सन्यास की दीक्षा देकर "दयानन्द सरस्वती" नाम रख दिया । अब दयानन्द स्वस्वती भोजनादि बनाने के झंझट से मुक्त हो विद्याध्ययन में लग गए । स्वामी पूर्णानन्द पूज्य स्वामी ओमानन्द के शिष्य थे और स्वामी विरजानन्द स्वामी पूर्णानन्द के शिष्य थे । स्वामी पूर्णानन्द जी स्वामी दयानन्द के गुरू थे । स्वामी पूर्णानन्द ने ही स्वामी दयानन्द को अपने शिष्य स्वामी विरजानन्द के पास मथुरा जाने की प्रेरणा दी थी ।

सन् १८५६ ई. के आस-पास :- गुरु दीक्षा लेने के बाद स्वामी जी चाणोद से हरिद्वार के कुम्भ के मेले में शामिल होने के लिए हरिद्वार आ गए । यहाँ अनेकानेक साधु-सन्तों से मिलकर उनसे योग तथा अन्य शास्त्रों के सम्बन्ध में काफी चर्चा की और वहाँ पर "पाखण्ड-खण्डनी" पताका लहरा कर सबको अचम्भित कर दिया । इसी समय सन् १८५६ ई. के स्वतन्त्रता आन्दोलन की तैयारी चल रही थी । इसके लिए प्रथम प्रमुख सभा सन् १८५५ ई. में हरिद्वार में हुई जिसमें भारत के अन्तिम सम्राट बहादुर शाह जफ़र के पुत्र फिरोज शाह अजीमुल्ला खाँ, रंगू बापू आदि विशिष्ठ जन सम्मिलित हुए । इसमें डेढ़ हजार के लगभग लोगों ने भाग लिया दूसरी सभा गढगंगा के मेले के अवसर पर गढ़गंगा के किनारे सम्पन्न हुई । इसमें लगभग अढ़ाई हजार की उपस्थिति थी । तीसरी महत्वपूर्ण सभा अक्टूबर के अन्त में सन् १८५५ ई. में फिर हरिद्वार में हुई । इस सभा में ६५६ साधुओं व १९५ मुसलमान सुफी सन्तों ने भाग लिया । इस सभाकी योजना स्वामी ओमानन्द जो स्वामी पूर्णानन्द का गुरू था और स्वामी पूर्णानन्द ने मिलकर तैयारी की । यह योजना स्वतन्त्रता संग्राम किस प्रकार किया जावे उस सम्बन्धी ही थी । जो बाद में सन् १८५६ ई. के स्वतन्त्रता संग्राम के नाम से प्रसिद्ध हुआ । इस योजना की पूरी व्यवस्था स्वामी विरजानन्द ने की थी । स्वामी दयानन्द इस योजना में गुप्त रूप से कार्य कर रहे थे । इसी समय स्वामी पूर्णानन्द ने स्वामी दयानन्द को स्वामी विराजानन्द के पास जाने की प्रेरणा दी थी कारण स्वामी पूर्णानन्द स्वामी विरजानन्द का भी गुरु था और उसकी विद्वता के बारे में सब जानते थे । मुझे यहाँ यह बतलाना भी जरूरी है कि जब भी देश की स्थिति बिगड़ी है, तब-तब साधु-सन्तों ने ही देश की स्थिती सुधारने का प्रभाव किया है । राम के समय जब राक्षसों का प्रभाव बढ़ गया था । तब स्वामी विश्वामित्र तथा वशिष्ठ आदि ने मिलकर राक्षसों के राजा रावण को मार कर राक्षसों के प्रभाव को समाप्त करने की योजना बनाई थी । इस योजना के अधीन राम को इस कार्य के लिए योग्य समझकर कैकई व दासी मन्थरा को तैयार किया गया था । जिससे राजा दशरथ अपने प्रिय पुत्र राम को स्वामी विश्वामित्र के साथ वन में भेजने के लिए तैयार हो जावे उसी प्रकार अंग्रेजों को देश से बाहर निकालने के लिए स्वामी ओमानन्द, स्वामी पूर्णानन्द व स्वामी विरजानन्द ने सन् १८५६ ई. के स्वतन्त्रता संग्राम वाली योजना बनाई थी । सन् १८५६ ई. के समय स्वामी ओमानन्द जो स्वामी पूर्णानन्द के गुरु थे, उनकी आयु १६० वर्ष की थी । स्वामी पूर्णानन्द जो स्वामी विरजानन्द के गुरु थे और स्वामी जी को भी सन्यास की दीक्षा थी और स्वामी विरजानन्द की आयु २७ वर्ष थी जो बाद में स्वामी दयानन्द की की आयु ३३ वर्ष की थी का गुरु बना । इस प्रकार इन सब साधु-सन्तों की सन् ८५६ ई. के स्वतन्त्रता संग्राम की योजना की थी । यहाँ यह बात बतलानी भी बहुत जरूरी है कि १८५६ के स्वतन्त्रता आन्दोलन को अंग्रेजो नें "सैनिक विद्रोह" का नाम दिया था । परन्तु बाद में वीर सावरकर ने इसे स्वतन्त्रता संग्राम घोषित किया और इसी नाम से एक पुस्तक भी लिखी इसलिए यह कार्य वीर सावरकर का बहुत ही सहरानीय कार्य था जिसके लिए लेखक वीर सावरकर की प्रशंसा करता है ।

६) **सदगुरु विरजानन्द की कुटिया पर :** सन् १८५६ ई. के स्वतनत्रता संग्राम में भाग लेने के बाद स्वामी जी सच्चे शिव को पाने के लिए अनेक स्थानों पर गए । जिनमें पर्वतों की ऊँची-ऊँची चोटियों पर गए । एक ऐसी बस्ती में गए जिसमें दुर्गा के भक्त रहते थे । उन्होंने स्वामी जी का हट्टा-कट्टा, लम्बा-तगड़ा आकर्षक शरीर देखकर स्वामी जी को दुर्गा जी को भेंट चढ़ाने के लिए उद्यत हो गए । परन्तु स्वामी जी उनकी चाल को समझ गए और उनकी तलवार को छीन कर तलवार के घुमाते हुए मन्दिर की दीवार फांद कर अन्धकार मे विलीन

हो गए । अपनी इस यात्रा में स्वामी जी ओखीमठ भी गए और वहाँ के महन्त से शास्त्र चर्चा भी हुई । मठ के महन्त स्वामी जी की विद्वता तथा आकर्षक व्यक्तित्व देखकर अत्याधिक प्रभावित हुए और उसने स्वामी जी को अपना शिष्य बन जाने को कहा, और मठ की लाखों की सम्पत्ति का स्वामी बन जाने को कहा, परन्तु उस महान् निर्लोभी स्वामी जी ने उस प्रलोमन को टुकरा दिया और आगे बढ़ गए । स्वामी जी बद्रीनारायण होते हुए अलकनन्दा नदी के तट पर जा पहुँचे । नदी के उद्गम स्थान पर पहुँचने के लिए स्वामी जी नदि में प्रवेश कर गए । मौसम इतना शीतल था कि नदि के पानी की भीजम गई थी की ऊपर सतह गई । जिस से स्वामी जी को नदि पार करने में अति कष्ट तो नहीं हुआ बल्कि किसी प्रकार जान बचाकर नदि को पार कर लिया । फिर वहाँ से वापिस बद्रीनारायण लौट आए । फिर यहाँ से काशीपुर द्रोणसागर मुरादाबाद होते हुए गढ़मुक्तेश्वर के रास्ते गंगा के घाट पर आकर विश्राम किया । इस बीच उन्हें जो ग्रन्थ मिले उनमें एक ग्रन्थ नाड़ीचक्र के सम्बन्ध में था । उसका अध्ययन करते हुए उसके सत्य में उन्हें संशय हो गया । उसी समय गंगा में बहे चले जा रहे एक शव पर स्वामी जी की दृष्टि पड़ी और वे गंगा में छलांग लगाकर शव को किनारे पर बाहर निकाल लिया और उसे तेजधार का चाकू निकाल कर शव की चीर-फाड़ करनी आरम्भ की । प्रथम हृदय बाहर निकाला और उसकी लम्बाई-चौड़ाई को नापा फिर ग्रन्थ में वर्णित नाभीचक्र आदि का परिक्षण किया परन्तु ग्रन्थ में लिखे की पुष्टि नहीं हुई तो उस ग्रन्थ को फाड़ कर फेंक दिया । इस घटना से स्वामी जी की जिज्ञासा प्रवृत्ति यानि सच्चाई जानने की प्रवृत्ति का आभास होता है।

स्वामी जी अपनी यात्रा पर फिर आगे निकल पड़े । वे गंगा के किनारे-किनारे चलते हुए फर्रूखाबाद, फिर कानपुर और प्रयाग व काशी होते हुए चाण्डालगढ़ पहुँच गए । वे रास्ते में योगाभ्यास करते रहे साथ ही विद्वान् सन्यासियों की खोज भी करते रहे ताकि किसी विलक्षण सन्त के दर्शन हो सके जिससे धर्म की चर्चा कर सके, परन्तु कोई ऐसे सन्त व सन्यासी के दर्शन नहीं हो सके । स्वामी जी आगे बढ़े तो नर्मदा नदि के तट पर जा पहुँचे । वहाँ चलते हुए उनको अचानक सामने एक विशाल काय काला रींछ दौड़ता हुआ आता दिखाई दिया और वह कुछ दूरी पर ठहरकर पिछले पैर पर खड़ा हो गया और जोर से चिंघाड़ा । स्वामी जी ने फूर्ति में अपना डण्डा जैसे ही रींछ की तरफ बढाया वह सामने ठहर न सका, परन्तु रींछ जाते समय इतने जोर से चीखा कि उसकी आवाज सुनकर पहाड़ी लोग अपने कुतों सहित वहाँ उपस्थित हो गए । और उन्होंने स्वामी जी से बस्ती में ठहरने की प्रार्थना की । परन्तु स्वामी जी ने उनको विनम्रता पूर्वक लौटा दिया । और अपनी राह पर बढ़ चले । आगे का मार्ग कांटो भरा जंगल था जिसको पार कर दिया और फिर तीन वर्षों तक उस नर्मदा नदी के किनारे ही घूमते रहे । फिर वे घुमते-घुमते मथुरा में जा पहुँचे और वहाँ स्वामी जी ने स्वामी विरजानन्द के दर्शन किए जिनसे मिलने के लिए उनकी आखिरी इच्छा थी जिसके पास जाने के लिए स्वामी पूर्णानन्द ने स्वामी दयानन्द को कही थी ।

६) **गुरू विरजानन्द के चरणें मे :-** स्वामी जी ने अपने गुरु के चरणों में बैंठकर लगभग तीन वर्षों तक आर्ष ग्रन्थों का अध्ययन किया और दयानन्द सन् १८६० ई. में व्याकरण के सूर्य दण्डी स्वामी विरजानन्द की कुटिया केद्वार खटकठाए । अन्दर से आवाज आई कौन ? दयानन्द बोले "मै सही जानने के लिए ही आया .हूँ कि मैं कौन हूँ" ? यह सुनकर विरजानन्द जी बड़े प्रसन्न हुए और यह समझ लिया कि आज वहीं शिष्य आया है जिसकी मैं इन्तजार में था । विरजानन्द ने दरवाजा खोला और एक विशाल काय को देखकर बड़े आचाम्भित हुए । दयानन्द ने गुरूजी के पैर छुकर प्रणाम किया और फिर पढ़ाने के लिए निवेदन किया । गुरु जी ने कहा तुमने अभी तक क्या पढ़ा है ? दयानन्द ने सब पुस्तक कों के नाम बता दिए । तब गुरुजी बोले ये सब अनार्ष ग्रन्थ है, मैं तुमको आर्षग्रन्थ पढ़ाऊँगा । पहले तुम इनको यमुना नदी में बहाकर आओ । दयानन्द ने यही काम किया और स्वामी विरजानन्द से पढ़ना आरम्भ कर दिया । स्वामी विरजानन्द ने दयानन्द को एक बात और कही थी कि पढा तो मैं तुमको दूगाँ लेकिन रहने की और खाने की व्यवस्था तुमको स्वयं को करनी होगी । सो रहने के लिएस्वामी जी ने मथुरा में विश्राम घाट के लक्ष्मीनारायण मन्दिर के नीचे प्रवेश द्वार के साथ एक छोटी सी कोठरी उन्हें मिल गई । यद्यापि वे उसमें पैर पसार कर सो भी नहीं सकते थे फि भी वे सन्तुष्ठ थे । भोजन के लिए कुछ समय के लिए दुर्गा प्रसाद क्षत्रिय, सदैव के लिए अमर लाल ज्योतिषी और पढ़ने के समय दिया में तेल के लिए लाला गोवर्धन सर्राफ द्वारा व्यवस्था हो गई । इन तीनों के प्रति हर आर्य समाजी हमेशा के लिए ऋणि बना रहेगा ।

स्वामी दयानन्द, गुरु विरजानन्द की बड़ी सेवा करता था (पढ़ते समय) । तथा कुटिया में झाड़ू लगाकर कुटिया को साफ रखता था । कभी किसी काम में भूल हो जाती तो गुरुजी की पिटाई भी सहन करता था ।

७) **गुरु दक्षिणा :** स्वामी जी अन्दाज तीन साल सद्गुरू विरजानन्द से शिक्षा लेने के बाद शिक्षा पूरी होने पर गुरु दक्षिणा के रूप में स्वामी जी कुछ लोग जो गुरुजी को अति प्यारी थी, लेकर गुरु विरजानन्द के पास पहुँचे, तब दण्ड़ी स्वामी विरजानन्द ने कहा "दया नन्द" ! मुझे दक्षिणा में लौंग नहीं चाहिए, तब स्वामी जी ने कहा कहो गुरुवर ! आपके शिष्य का तन, मन गुरु चरणों में समर्पित है तब गुरूजी ने कहा दयानन्द ! देश में अज्ञान का अन्धकार छाया हुआ है, कुरितीयों में फंसे लोग निश्चि जीवन जी रहे है । अन्धकार की जड़े गहरी हो गई है । वैदिक ग्रन्थों का पठन-पाठन, चिन्तन मनन विलुप्त सा हो गया है । विभिन्न मत-मतान्तरों ने अपने पैर फैला लिए है । दीन-हीन समाज दुर्गाति की ओर अग्रसर है । समाज को इस अद्योगति से बचाया, लोक कल्याण के लिए स्वयं को समर्पित करो । सो ते देश को जागृत करो । इसके अतिरिक्त गुरु दक्षिणा में मुझे और कुछ नहीं चाहिए ।

स्वामी दयानन्द ने अपना सिर गुरु चरणों में रख दिया और बोले । आपकी आज्ञा शिरो धार्य गुरुवर ! और दयानन्द जीवन भर समाज सेवा के लिए कार्य क्षेत्र में उतर पड़े ।

स्वामी जी सन् १८६३ ई. में गुरु विरजानन्द से विदाई ली और सन् १८८३ ई. में स्वर्गवासी हो गए इन बीच के २० वर्षों में स्वामी जी ने जितना काम किया उतना काम हर व्यक्ति नहीं कर सकता । इन बीस वर्षों में स्वामी जी ने सैकड़ों शास्त्रार्थ हजारों मुल्लाओं, पादरियों व पौराणिक पण्डितों से किए, जिसमें काशी का शास्त्रार्थ उनका सबसे अधिक प्रसिद्ध है ।

पूरे भारत में घूम-घूम कर वेद प्रचार, कुरितियाँ०कुप्रथाओं के विरुद्ध हजारों वक्तव्य दिए और भी अनेकों कार्य किए जिनमें आजमेर में सन् १९६६ ई. में कर्नल वुक्स से गोरक्षा की पैरवी करने की कहीं। सन् १८६७ ई. में हरिद्वार के कुम्भ मेले पर "पाखण्ड-खण्डनी" पताका लहराई, सन् १८६८ ई. में किसी धर्मान्ध ब्राह्मण ने स्वामी जी को पान में विष दे दिया। उसको कारावास न करवाकर छुड़वा दिया। सन् १८६८ ई. में ही सव कर्ण सिंह ने स्वामी जी के ऊपर तलवार से वार किया तव कर्णसिंह से तलवार छीन कर उसके दो टुकड़े कर दिए। सन् १८६९ ई. में काशी के पौराणिक विद्वानों से वेदों में मुर्ति पूजा नहीं विषय पर शास्त्रार्थ किया और विजय प्राप्त की, सन् १८७५ ई. में गिरगाँव मोहल्ले में डॉ. माणिक चन्द की वाटिका में १० अप्रैल १९७५ ई. में मुम्बई में "आर्य समाज" की स्थापना की ताकि मेरे जाने के बाद भी वेद प्रचार व देश सुधारक काम चलता रहे। वहाँ आर्य समाज के २८ नियम बनाए गए। सन् १८७५ ई. में ही स्वामी जी ने न्यायाधिश श्री महादेव गोविन्द रानाडे के विशेष अनुरोध पर पूना में पन्द्रह प्रवचन सभी विषयों पर किए जो काफी प्रसिद्ध है। सन् १८७५ ई. में स्वामी जी ने दिल्ली में सभी समाज सुधारकों की बैठक बुलाई। जिसमें श्री केशव चन्द्र सेन, सर सैयद अहमद खाँ, श्री हरिशचन्द चिन्तामणि, श्री नवीन चन्द्र राय, श्री कन्हैयालाल जी अलखधारी और श्री इन्द्रमणि जैसे समाज सुधारक उपस्थित हुए। स्वामी जी की इच्छा थी की देश जो अद्योगति को जा रहा है। उसकी उन्नति के लिए हम सब मिल कर रास्ता निकाले किन्तु वैचारिक सामञ्जस्य के अभाव में महर्षि जी की यह योजना सफल नहीं हो सकी। सन् १८६६ ई. में स्वामी जी लाहौर पधारे। यहाँ स्वामी जी मुम्बई में बनाए गए २८ नियमों को छोटा रूप देकर दस नियम बनाए जो अभी तक चलते आ रहे है। लाहौर से स्वामी जालन्धर पहुँचे, वहाँ सरदार विक्रम सिंह जी के कहने से दो घोड़ों की बग्गी को रोक कर अपने ब्रह्मचर्य का प्रदर्शन किया। इसके बाद २५ दिसम्बर १८७५ ई. को रिवाड़ी पहुँचे और वहाँ आर्य समाज की स्थापना कि और सब युधिष्ठर के हाथों एक गऊशाला की स्थापना भी करवाई जिस को भारत की सर्वप्रथम गऊशाला का गौरव प्रापत है। सन् १८७५ ई. स्वामी जी बरेली पहुँचे, वहाँ नानक कोतवाल के पुत्र मुन्शीराम से जो ईश्वर को नहीं मानते थे और नास्तिक थे। जब पिताजी के कहने से मुन्शीराम ने स्वामी जी के प्रवचन सुने जो ईश्वर की सत्ता के सम्वन्ध में थे तो मुन्शीराम वहुत अधिक प्रभावित हुए और स्वामी जी की दिनचर्या और प्रवचनों से मुन्शीराम पक्का अस्तिक और ईश्वर भक्त हो गया। यही मुन्शीराम आगे चल कर स्वामी श्रद्धानन्द बने और आर्य समाज के विख्यात विद्वान व सन्यासी वने। १६ मई सन् १८८१ ई. में प. लेखराम पेशावर से चलकर अजमेर में स्वामी जी के दर्शन किए और कुछ प्रस्नों के सही उत्तर पाकर पं. लेखराम पक्के आर्य समाजी बने गए। आगे चलकर २६ फरवरी १८८३ ई. को उदयपुर में परोपकारिणि सभा स्थापित की जो आज भी सुचारू रूप से चल रही है। अजमेर में स्वामी जी जोधपुर के महाराजा सज्जन सिंह के निमंत्रण पर जोधपुर चले गए। वहाँ महाराजा के एक वेश्या नन्हीजान से गलत सम्बन्ध देखकर स्वामी जी ने महाराज पर फटकार लगाई जिससे नन्हीजान को धित होकर स्वामी जी के रसोईया जगन्नाथ मिश्रा को कुछ प्रलोभन देकर उससे स्वामी जी के दूध में काल कूट विष डालकर पिला दिया जिससे स्वामी जी ३० अक्टूवर १८८३ ई. को दिपावली के दिन सायं ६ बजे स्वर्गवासी हो गए और वह सब का कल्याण चाहने वाला महामानव सदा-सदा के लिए इस संसार को छोड़कर चले गए। इसकी पवित्र आत्मा जहाँ कहीं पर भी है, उसको मेरा हृदय से नमन !

इस लेख में मैंने महर्षि देव दयानन्द की पूरी जीवनी, बड़े छोटे रूप में प्रस्तुत की है। इसलिए इस लेख को पढ़ने के बाद, उसे महर्षि के पूरे जीवन की जानकारी हो जाएगी। ऐसा मुझे पूर्ण विश्वास है। सभी सच्चे पाठक गाण मेरे इस सद्प्रयास का लाभ उठावें। इसी में मेरी प्रसन्नता निहित हैं।

Fasting-
THE MASTER REMEDY

Fasting refers to complete abstinence from food for a varying length of time. The word is derived from the old English, 'feastan' which means to fast, observe, be strict.

Fasting is nature's oldest, most effective and yet least expensive method of treating disease. It is recognised as the cornerstone of natural healing. Dr. Arnold Eheret, the originator of the mucusless diet healing system, describes it as "nature's only universal and omnipotent remedy of healing" and "nature's only fundamental law of all healing and curing".

The practice of fasting is one of the most ancient customs. It is followed in almost every religion. The Mohammedans, the Buddhists, the Hindus and many others have their periods of strict fasting. The saints of medieval times laid great stress on this method.

Fasting in disease was advocated by the school of natural philosopher, Asclepiades, more than two thousand years ago. Throughout medical history, it has been regarded as one of the most dependable curative methods. Hippocrates, Galen, Paracelsus and many other great authorities on medicine prescribed it. Many noted modern physicians have successfully employed this system of healing in the treatment of numerous diseases.

The common cause of all diseases is the accumulation of waste and poisonous matter in the body which results from overeating. The majority of persons eat too much and follow sedentary occupation which do not permit sufficient and proper exercise for

కృషి సంపద

-చలవాది సోమయ్య

పశుసంపద పిదప నెన్నదగినది "కృషి సంపద"

"ఏకోద్వేవసుమతీ సమీ చీ ఇంద్ర అపప్రా పృథివీ ముతద్యాం" -ఋ.3-30-31

అర్థము : ఏక ఇంద్రః-ఒకే ఒకడగు పరమాత్ముడు, **ద్వేపృథివీం ఉపద్యాం**-పృథివ్యాకాశముల రెంటిని, **సమీచీవ సుమతీ అపప్రా**-విస్తార ధనా దాయకములుగా రచించెను.

పృథివి ద్యులోకములను రెండింటిని (వసుమతీ) ధనదాయకములని వేదమున చెప్పబడినది. మేఘము వర్షించినచో పృథివి సస్యోత్పత్తి చేయగలదు కాని మానవుడు తన జ్ఞానముతో భూమిని సాగుచేసి ఆహారోత్పత్తి చేయవలయును. పశువులవలె కేవలం ఈశ్వరునిపై ఆధారపడ రాదు.

"సేరాయుంజంతీ కవయోయుగా వితన్వతే పృథక్ ధీరా దేవేషునుమ్నయా" -అ.3-17-1

అర్థము : **దేవేషు సుమ్నయా**-దేవప్రియులైన, **ధీరాః కవయః** -బుద్ధిమంతులు, జ్ఞానులునగు వారు, **సీరాయుంజంతి**-నాగలితో దున్నుదురు, **పృథక్ యుగావితన్వతే**-ఎద్దుల మెడలపై కాడినుంతురు, వ్యవసాయము చేయువారి నీ మంత్రమందు దేవప్రియులనియు, కవులనియును, ధీరులనియును చెప్పబడింది. ఏలనగా యావత్ప్రపంచము కొరకై ఆహారోత్పాదన మొనర్చుట శ్రేష్ఠులు జ్ఞానులునగు పురుషుల కర్తవ్యము, పృథివి-వసుమతి. దాని యంతు సంపద నిండియున్నది. కాని జ్ఞాన పరిశ్రమ లుపయోగింపబడవేని అన్నోత్పత్తి జరుగనేరదు. అజ్ఞానులైన ఆటవికుల ఓంత విస్తృతములైన భూవసతులు పడియున్నవి. వానిలో నెవరును నాగలిచే నేలదున్నరు. అచటి వారా భూమి నుండి ఆహారమును గైకొనజాలరు. శిక్షితులు, విజ్ఞానవేత్తలు నైనవారి అధికారము క్రిందికి భూవసతులు వచ్చెనేని అచటి వారికే గాక అన్య దేశీయులకు కూడ ఆహారము పుష్కలముగా లభించును.

"యునక్తసీరా వియుగాతనోత కృతేయోనావపతేః హ బీజం విరాజః శ్నుష్టిః సభరా అసన్నోనేదీయ ఇత్ సృణ్యః పక్వమాయవన్"

-అ.3-17-2

అర్థము : యునక్త సీరా-నాగలితో దున్నుము, **యుగాఃవితోనోత**-కాడిని సవరించుము, **కృతే యోనౌ**-పొలములో చాళ్ళు నేర్పరపుము, **ఇహబీజం వపత**-దానియందు విత్తనము వేయుము, **విరాజః శ్నుష్టిః సభరా అసన్**-ఈశ్వరుని కృపవలన మాభాగ్యము సమృద్ధమగుగాక, **నః నేదీయ ఇత్ సృణ్యః పక్వం అయవన్**-మా పంటలు కోతకు వచ్చును గాక. మనము బుద్ధిపూర్వకముగా నాగలితో భూమిని దున్ని చాళ్ళలో విత్తనములు వేయుదుమేను ఈశ్వరుని కృపచే పైరులు పెరిగి కోతకు వచ్చును. వానిని మన కొడవండ్లతో కోసికొందుము.

ఋగ్వేదము మం. 10 (యజుర్వేద. 2లో 67-68 మంత్రములందు కూడ ఇదే యున్నది.) 101వ సూక్తములో శబ్దాంతరముల చేత ఈ యాశయమునే ప్రతిబింబింప చేయు మంత్రము లున్నవి.

"యునక్తసీరా వియుగా తనధ్వంకతో యోనౌ వపతేహ బీజం । గిరాచస్పుష్టిః సభర అసన్ నోనేదీయ ఇత్ సృణ్యః పక్వమీయాత్" (మం.3)

"సీరాయుంజంతి కవయోయుగా వితన్వతే పృథక్ ధీరా దేవేషు సుమ్నయా" (మం.4)

"నిరాహవాన్ కృణోతన సంవరత్రా దధాతనం సించా మహాఅవత ముద్రిణం వయం సు షేకమనుప క్షితం' (మం.5)

మూడవ మంత్రమందు "గిరా"-మరియు "సృష్టి" అనురెండు శబ్దములున్నవి అందు "గిరా" । వాణి, జ్ఞానద్యోతకము మరియు సృష్టి అన్నద్యోతకము వీని వలన జ్ఞానవంతుడే మంచి రైతు కాగలడు. ప్రపంచమందు ప్రాణులకు రైతే అన్నదాత యగుట సమాజమందతనికి ఉన్నత స్థానముండవలయును. 5వ మంత్రమందు **"ఆహావాన్ నిహీ కృణోతన"** అనగా గోవృషభాదులు నీరు త్రాగుటకు అనుకూలముగా జలాశయములను నిర్మించు విధానమున్నది. **"ఉద్రిణం అవతం"** అనగా నీటితో నిండిన చెఱువులు, కుంటలు, బావులు, "వరత్ర" అనగా త్రాడు. వీటితో బొక్కెనలను కట్టి భూమిని తడుపుటకై నీరు లాగుదురు. వేదములందు భూమిని దున్నుట, విత్తనము చల్లుట, నీరు కట్టుట, సస్యములు కోయుట మున్నగు అపదేశములున్న వనిదీని తాత్పర్యము.

యజుర్వేదము అ. 18-12వ మంత్రమందు అనేకములగు ధ్యానముల పేర్లు చెప్పబడియున్నవి

"వ్రీహయశ్చమే యవాశ్చమే మాషాశ్చమే తిలాశ్చమే ముద్గాశ్చమే ఖల్వాశ్చమే ప్రియంగవశ్చమే అణవశ్చమే స్యామాకాశ్చమే నీవారాశ్చమే గోధూమాశ్చమే మసూరాశ్చమే యజ్ఞేన కల్పంతాం"

అర్థము :- ఇచట **వ్రీహి**-వడ్లు, **యవ**-యవలు, **మాష**-మినుములు, **తిల**-నువ్వులు, **ముద్గ**-పెసలు ఇట్లే ఖల్వ, ప్రియంగవ, స్యామాక నీవారాది వివిధములైన ధాన్యములను పండించు విధానమున్నది. యజ్ఞేన కల్పంతాం అనగా యజ్ఞము వలన నివి ఉత్పన్నమగుగాత. యని యున్నది ఇచట యజ్ఞమున కర్థము కృషియజ్ఞము వ్యవసాయము చేయుటయును, యజ్ఞమేయగును,యజ్ఞము అగ్నిహోత్ర మొనర్చి ఆహుతులిచ్చుటమాత్రమే కాదు. జీవనోపాధికై వలయు పదార్థముల నుత్పత్తి చేయుట కూడ యజ్ఞమే. ఈ వివరణము ద్వారా ప్రతి రైతు యజమానుడులేక యజ్ఞకర్త యనబడును. పురాణగాథలలో జనకుని సునాశీరుడు లేక నాగలి దున్నువాడు అన్నారు. ఈ సునాశీర శబ్దము వేదము నుండి తీసికొనబడినది.

"శునాశీరా హవిషా తోషమానా సుపిప్పలా ఓషధీః కర్తమస్మై"

అర్థము : శునాశీర-అనగా హలమా ! హలమునదుపు మానవులారా ! **హవిషాతో శమానా**-జీవనోపాధికములగు పదార్థములతో ప్రసన్నచితులై, **తస్మై**-ఈ ప్రజల కొరకు, **ఓషధీః** -పైరులను, **సుపిప్పలాః** -చక్కగా పంట పండునట్లు, **కర్తం**-సిద్ధపరచుడు.

ఇచట శునాసీరా, తోశమాన అను పదములు ద్వివచనాంతములు, కృషిని, కర్షకులను కూడ సంబోధించినవి. 'శునా' అనగా నాగలి 'సీరా' అనగా దాని ఏడికోల. ఈ రెండును కృషి కార్యమునకు ప్రతీకములు కృషి కార్య చిహ్నములు.

సమస్త మానవ జీవనము యొక్క భౌతిక వస్తుభారము వ్యవసాయముపై నాధారపడియుండుటచే వైదిక విజ్ఞానము కృషిని సర్వోత్తమ కర్మనుగా పేర్కొన్నది.

కృషియజ్ఞమును కొరత లేకుండ సుపంపన్న మొనర్చుటకు ఖనిజ పదార్థము లావశ్యకములగు చున్నవి. వాని ప్రాప్తికై ఖనిజయజ్ఞము వేదమున నిట్లు ప్రతిపాదింపబడినది :-

"అశ్మాచ మే మృత్తికాచ మే గిరయశ్చ మే పర్వతాశ్చ మే సికతాశ్చ మే వనస్పతయశ్చ మే హిరణ్యంచ మే శ్యామంచ మే లోహంచ మే సీసంచ మే సీసంచ మే త్రపుచ మే యజ్ఞేక కల్పంతాం" -య. 18-13

ఇచట **అశ్మా**-రాయి, **మృత్తిక**-మట్టి, **గిరియః** -గుట్టలు, **పర్వతాః** -పర్వతములు, **సికతా**-ఇసుక, **వసస్పతయః** -అడవికఱ్ఱ. **హిరణ్య**-బంగారము, **శ్యామ**-వెండి, **లోహి**-ఇనుము, **త్రపు**-సీసముల యొక్క వర్ణనమున్నది. ఈ పదార్థములు యంత్రాదుల నిర్మాణమునకు పనికి వచ్చును.

వ్యాపారము

ఇంద్రమహం వణిజం చోదయామి సనఏతు పుర ఏతానో అస్తు। నుదన్న రాతిం పరిపంథినం మృగం స ఈశానో ధనదా అస్తుమహ్యం ॥ యే పంథా నోబహవో దేవయానా అంతరా ద్యావా పథివీ సంచరంతి । తేమా జుషంతాం పయసా ఘృతేన యథా క్రీత్యా ధన మహరాణి ॥

ఇందు వణిజుని-వ్యాపారిని ఇంద్రుడన్నారు. వ్యాపారము చేయుటకు రాకపోకల సౌకర్యము లుండవలయును. మార్గములో దోపిడి గాంధ్రు మరియు పులులు మున్నగు ఘూతక మృగము లుండ గూడదు.

యే బహవో పంథానః -ఏ రాజమార్గము లు-**ద్యావా పృథివీ అంతరా**-పృథివీ, ద్యులోకము అంతరిక్షములో గలవో, ఎచట-**దేవయానాః** -వాయు యానములు నడచునో-**తే మా పయసా ఘృతేన జుషంతాం**-అవి నాకు జీవన సాధనము లగు పాలను, నేయిని ఇచ్చుగాక ! -**యథా క్రీత్వా**-వానితో నేను వ్యాపారము చేసి-(ధనం)- ధనమును-**అహరాణి**-సంపాదింతును గాక !

ఇచట వర్తక మండలుల, వర్తక వాయు యానములు చర్చ గలదు, 'వణిజ' అనగా కోమటి-ఇంద్రుడు. అతని వాయు యానములే దేవయానములు. క్రీత్వా అనగా క్రయ విక్రయ ముల ద్వారానే ఒకచోటి నుండి సామాగ్రిని దూర దేశములకు పంపగల్గుదురు. దీని వలననే ధనము లభించగలదు. నాలుగు వర్ణములలో వైశ్యునికే ఉత్పత్తి-(వ్యవసాయం కలాకౌశలము మొదలగునవి) రాకపోకలు వినియోగము మరియు ధనప్రాప్తి యొక్క ఇతరేతర విభాగము లతో సంబంధముగలదు. ఇంతియేగాక విద్య, వైద్య కలాకౌశలము మొదలగు విషయములకు సంబంధించిన సామాగ్రి ఎంతయో గలదు. స్థలా భావము వలన దాని నిచ్చుట ఇవ్వలేకున్నాను.

మానవులందరు వేద సిద్ధాంతమును సామూహికముగ పాటించిననాడు సమాజములో కొన్ని రోగములుండవు. ఆకాలము లుండవు. బీదతనము, దారిద్ర్యము, దేశద్రోహము ఉండవు. వారికి లభించు భౌతిక దుఃఖములు వేద సిద్ధాంతమును పాటింపనివారికి లభింప జాలవు మను మహర్షి-

యోఽన ధీత్వ ద్విజోవేద మన్యత్ర కురుతే శ్రమం । న జీవన్నేవ శూద్రత్వమాశుగచ్ఛతి సాన్వయః ॥

వేదమును మాని ఇతర కార్యములలో మునిగి యుండువాడు తత్కాలము తన కుటుంబముతో సహా నానా దుఃములలో కొనునన్నాడు.

మహా భారత యుద్ధములో వేద విద్వాంసులు, వేదములు ననుసరించువారు గతించుట ! వలన వేదధర్మము క్రమముగా ఆడుగంటుతు వచ్చినది. దాని వలన మానవుల క్లేశములు పెరుగ సాగినవి. ఇప్పుడు మనకు స్వాతంత్ర్యము లభించినది. కాని వేద ధర్మానికి, నీతికి తగిన స్థానము లేదు. ఒకరిపైన ఒకరికి పూర్వమున్నంత ప్రేమ, విశ్వాసము గౌరవము ఇప్పుడు లేదు. అప్పటి పరోపకార భావము సరలత ఇప్పుడు లేదు. పరిణామముగా పరోపకార భావము నశించినది. ఒకరిపైన ఒకరికి విశ్వాసము, గౌరవము క్షీణించుచున్నది. ఇది సాక్షాత్తు మనకు కనబడుచున్నది. దీని నుండి తప్పించుకొనే గోరినచో మళ్ళీ వేద ధర్మమును తెలిసి కొనవలయును జన సామాన్యులకు వేద సిద్ధాంతమును తెలిసి కొనుటకు వీలుగా **"వేదము మానవ కళ్యాణము"** అను ఈ చిన్న పుస్తకమును పాఠకుల కందించు చున్నాము. దీనిలో కీ॥ శే॥ శ్రీ గంగా ప్రసాద ఉపాధ్యాయ గారు వేదము యొక్క స్వరూపము, వేదములోని కొని విద్యలు, వాటి వలన మానవులకు చేకూరు హితము గురించి వేదాధారము ననే వివరించినారు. వేదసముద్రమును జనసామాన్యులకు రుచి చూపించుటకు వారి ఈ రచన ఉత్తమము. మేము వారికి కృతజ్ఞులము.

utilisation of this large quantity of fo. This surplus overburdens the digestive and assimilative organ and clogs up the system with impurities or poisons. Digest and elimination become slow and the functional activitiy of whole system gets deranged.

The onset of disease is merely the process of ridding system of these impurities. Every disease can be healed by one remedy-by doing just the opposite of what causes that is, by reducing the food intake or fasting.

By depriving the body of food for a time, the orgas elimination such as the bowels, kidneys, skin and lungs given opportunity to expel, unhampered, the overload accumulated waste from the system. Thus, fasting is merely process of purification and an effective and quick method cure. It assists nature in her continuous effort to expel force matter and disease producing waste from the body, there correcting the faults of improper diet and wrong living. It also leads to regeneration of the blood as well as the repair and regeneration of the various tissues of the body.

Duration

The duration of the fast depends upon the age of the patient, the nature of the disease and the amount and type of drugs of previously used. The duration is important, because long periods of fasting can be dangerous if undertaken without competent professional guidance. It is, therefore, advisable to gradually increase the duration of each succeeding fast by a total fasting at a time. This will enable the chronically sick body to gradually and slowly eliminate toxic waste matter without seriously effecting the natural functioning of the body.

आर्य एवं राष्ट्रीय पर्वो की सूची : विक्रमी सम्वत् 2078-78 तदनुसार सन् 2021

क्र.सं.		पर्व का नाम	चन्द्र तिथि	अंग्रेजी दिनांक	दिन
1.		लोहड़ी	पौष अमावस्या, वि. 2077	13/01/2021	बुधवार
2.		मकर-संक्रान्ति	पौष शुक्ल, 1 वि. 2077	14/01/2021	गुरुवार
3.		गणतन्त्र दिवस	पौष शुक्ल, 13 वि. 2077	26/01/2021	मंगलवार
4.		वसन्त-पंचमी	माघ शुक्ल, 5 वि. 2077	16/02/2021	मंगलवार
5.	ऋषि-पर्व	सीताष्टमी	फाल्गुन कृष्ण, 8 वि. 2077	06/03/2021	शनिवार
6.	ज्योति-पर्व	महर्षि दयानन्द जन्मोत्सव	फाल्गुन कृष्ण, 10 वि. 2077	08/03/2021	सोमवार
7.	वीर-पर्व	शिवरात्रि (ऋषि बोधोत्सव)	फाल्गुन कृष्ण, 13 वि. 2077	11/03/2021	गुरुवार
8.	मिलन-पर्व	पं.लेखराम बलिदान दिवस (वीर तृतीया)	फाल्गुन शुक्ल, 3 वि. 2077	16/03/2021	मंगलवार
9.		नवसंस्येष्टि (होली)	फाल्गुन कृष्ण, वि. 2077	28/03/2021	रविवार
10.		आर्य समाज स्थापना दिवस/	फाल्गुन पूर्णिमा, 1 वि. 2077	13/04/2021	मंगलवार
		चैत्र शुक्ल प्रतिपदा/नवसम्वत्सर/	चैत्र शुक्ल, 1 वि. 2078		
		उगाड़ी/ड़ी पड़वा/चैती चांद			
11.		वैशाखी		14/04/2021	बुधवार
12.		रामनवमी	चैत्र शुक्ल, 2 वि. 2078	21/04/2021	बुधवार
13.	वेद-प्रचार समारोह	पं.गुरुदत्त विद्यार्थी जन्मदिवस	चैत्र शुक्ल, 9 वि. 2078	26/04/2021	सोमवार
14.		विश्व पर्यावरण दिवस	चैत्र शुक्ल, 14 वि. 2078	05/06/2021	शनिवार
15.		अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस	ज्येष्ठ कृष्ण, 11 वि. 2078	21/06/2021	शनिवार
16.		हरितृतीया (हरियाली तीज)	ज्येष्ठ शुक्ल, 11 वि. 2078	11/08/2021	बुधवार
17.	क्षमा-पर्व	श्रावणी उपाकर्म-रक्षा बन्धन/	श्रावण शुक्ल, 3 वि. 2078		
	बलिदान-पर्व	हैदराबाद सत्याग्रह दिवस	श्रावण पूर्णिमा, वि. 2078	22/08/2021	रविवार
18.		श्री कृष्णजन्माष्टमी	श्रावण पूर्णिमा, वि. 2078		
19.		स्वतन्त्रता दिवस	भाद्रपद कृष्ण, 8 वि. 2078	30/08/2021	सोमवार
20.		गाँधी जयन्ती/लाल बहादुर शास्त्री जयन्ती	श्रावण शुक्ल, 7 वि. 2078	15/08/2021	रविवार
21.		विजय दशमी/दशहरा	अश्विन कृष्ण, 11 वि. 2078	02/10/2021	शनिवार
22.		स्वामी विरजानन्द दण्डी जन्म दिवस	अश्विन शुक्ल, 10 वि. 2078	15/10/2021	शुक्रवार
23.		दीपावली (ऋषि निर्वाणोत्सव)	अश्विन शुक्ल, 12 वि. 2078	17/10/2021	रविवार
24.		स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस	कार्तिक अमावस्या, वि. 2078	04/11/2021	गुरुवार
			पौष कृष्ण, 4 वि. 2078	23/12/2021	गुरुवार

Date of Publication 2nd and 17th of every Month, Date of Posting 3rd and 18th of every Month
आर्य जीवन 18-01-2021 Registered-Reg. No. D/RNP/HD/783/2021-23 RNI No. 52990/93

ఆర్య జీవన్

హిందీ-తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక
Editor : Sri Vithal Rao Arya, M.Sc., LL.B., Sahityaratna.
Arya Pratinidhi Sabha A.P.-Telangana, Sultan Bazar, Hyderabad-500095.
Phone No. : 040-66758707, 24753827, Fax : 040-24557946.
Annual Subscription Rs. 250/- సంపాదకులు : విఠల్ రావు ఆర్య, ప్రధాన సభ

To,

श्रद्धांजलि

आर्य समाज ध्रुवपेट के प्रधान का निधन

रविवार दि. १० जनवरी २०२१ को तड़के राजकुंवर सिंह जी का निधन हो गया । वे ८३ वर्ष के थे । आर्य समाज ध्रुवपेट की ओर से उनका अंतिम संस्कार वैदिक पद्धति से संपन्न किया गया ।

(स्व.) ठाकुर राजकुंवर सिंह ने निज़ाम कॉलेज से बी.ए. किया था । तत्कालीन आँध्र प्रदेश पब्लिक सर्विस कमीशन विभाग से वर्ष १९९७ में गज़िटेड पोस्ट से सेवा-निवृत्त हुए थे । आर्य समाज का प्रभाव उन पर बचपन से ही था । सेवा-निवृत्त होने के उपरान्त वे सक्रिय रूप से आर्य समाज ध्रुवपेट से जुड़-गए थे । विगत चौबीस वर्षों से उन्होंने आर्य समाज ध्रुवपेट के मन्त्री और प्रधान के पदों पर रहकर अपनी सेवाएँ अर्पित कीं ।

(स्व.) ठाकुर राजकुंवर सिंह एक कुशल प्रबंधक थे । समाज में व्याप्त अस्त-व्यवस्तताओं को उन्होंने दूर किया था । सरकारी कार्यालय के अधिकारी होने के अपने अनुभवों को उन्होंने आर्य समाज के कार्य-कलापों में उपयोग किया था । स्वाध्याय और प्रवचन में वे निपुण थे । हिन्दी-उर्दू के कई गीत एवं शेयर उन्हें कंठस्थ थे । फ़िल्मी गीतों की धुनों पर आर्य समाज के कई भजनों को वे सत्यसंगों में सुनाया करते थे ।

उनके पिताजी पहले सेना में थे और बाद में राज्य के पुलिस विभाग में घुड़सवार-दल में उच्च अधिकारी भी रह चुके थे । अपने पिताजी की छाप इन पर भी पड़ी थी और इस कारण इन्हें घुड़सवारी का भी शौक़ था ।

वे अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़ गए । उनके निधन से आर्य समाज ध्रुवपेट ने एक कर्मठ और सुलझे हुए व्यक्ति को खो दिया है ।

परमात्मा से प्रार्थना है कि उनकी आत्मा को शान्ति तथा उनके शोकाकुल परिवार को इस दारुण दुख को सहन करने की शक्ति प्रदान करें।

आर्य प्रतिनिधि सभा, आ.प्र. -तेलंगाना परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करती है कि दिवंगत आत्मा को सद्गति प्रदानकर दुःखी परिवार को कष्ट सहने का साहस दे । **-विट्ठल राव आर्य**
प्रधान, आर्य प्रतिनिधि सभा आ.प्र. -तेलंगाना

श्रद्धांजलि

आर्य समाज राष्ट्रपति रोड़ सिकन्द्राबाद के उपप्रधान

श्री सुक्का कृष्णा जी

का दि. २ जनवरी २०२१ को निधन हुआ । वे एक आर्य समाज के प्रति समर्पित व्यक्ति थे और आर्य प्रतिनिधि सभा आ.प्र. -तेलंगाना के भी पिछले कई वर्षों से प्रतिनिधि रहें हैं । ऐसे समर्पित कार्यकर्ता का खोना आर्य समाज के लिए बहुत बड़ी क्षति है ।

आर्य प्रतिनिधि सभा, आ.प्र. -तेलंगाना परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करती है कि दिवंगत आत्मा को सद्गति प्रदानकर दुःखी परिवार को कष्ट सहने का साहस दे ।

-विट्ठल राव आर्य
प्रधान, आर्य प्रतिनिधि सभा आ.प्र. -तेलंगाना

25/1/21

श्रद्धांजलि

కీ.శే. శ్రీ నల్లవెల్లి వెంకటేశం గారు

आर्य समाज राष्ट्रपति रोड़ सिकन्द्राबाद के पूर्वप्रधान

श्री एन. वेंकटेशम जी

का दि. ३ जनवरी २०२१ को निधन हुआ । वे ९२ वर्ष के थे । वृद्ध होते हुए भी वे एक चुस्त कार्यकर्ता थे । उनमें आर्य समाज के प्रति असीम श्रद्धा थी । वे आर्य प्रतिनिधि सभा, आ.प्र. -तेलंगाना के प्रतिनिधि भी रहे । ऐसे कर्मठ एवं अनुभवि कार्यकर्ता का खोना आर्य समाज की बहुत बड़ी क्षति है । आप कई वर्षों से आर्य समाज राष्ट्रपति रोड़ की सेवा करते रहे है ।

आर्य प्रतिनिधि सभा, आ.प्र. -तेलंगाना परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करती है कि दिवंगत आत्मा को सद्गति प्रदानकर दुःखी परिवार को कष्ट सहने का साहस दे ।

-विट्ठल राव आर्य
प्रधान, आर्य प्रतिनिधि सभा आ.प्र. -तेलंगाना

THE VIEWS & THE NEWS PUBLISHED IN THIS ISSUE MAY NOT NECESSARILY BE AGREEABLE TO THE EDITOR.
***Editor :* Sri Vithal Rao Arya • E-mail : acharyavithal@gmail.com, Mobile : 09849560691.**

సంపాదకులు : శ్రీ విఠల్ రావు ఆర్య, ప్రధాన సభ, ఆర్య ప్రతినిధి సభ ఆ.ప్ర.-తెలంగాణ, సుల్తాన్ బజార్, హైదరాబాద్-95. Ph : 040-24753827, E-mail : acharyavithal@gmail.com
संपादक : श्री विट्ठल राव आर्य, प्रधान सभा ने सभा की ओर से आकृति प्रिन्टर्स, चिक्कड़पल्ली में मुद्रित करवा कर प्रकाशित किया ।
प्रकाशक : आर्य प्रतिनिधि सभा, आं.प्र. -तेलंगाना, सुल्तान बाज़ार, हैदराबाद-500 095.